Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 GISRRJ | Volume 4 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

आलोचना दृष्टि और रिचड्र्स का सौंदर्यशास्त्र

प्रियंका चौधरी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

Article Info
Volume 4 Issue 5
Page Number: 45-50

Publication Issue :
September-October-2021

Article History
Accepted : 01 Sep 2021
Published : 30 Sep 2021

सारांश- रिचड्र्स मूलत: कविता के व्याख्याकार हैं सिद्धांत निर्माता हैं। अपने आरंभिक लेखन-काल में ही रिचर्डस ने कविता की भाव-प्रक्रिया और अर्थ प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित किया।रिचड्र्स ऐसे आलोचक है जिन्होंने कविता की प्रकृति के विश्लेषण के लिए एवं वैज्ञानिक प्रतिपादन से उसका अन्तर दिखाने के लिए मनोविज्ञान की सहायता ली। रिचड्र्स ने मनोविज्ञान का उपयोग मूलत: पाठक या भावक की मन:स्थिति के लिए किया। काव्यानुभूति पाठक को किस प्रक्रिया से प्राप्त होती है, उस अनुभूति का उसके ऊपर कैसा प्रभाव पड़ता है, उसका मूल्य क्या है, सफल भाव संचार के लिए भावक (पाठक) की कौन सी योग्यताएँ अपेक्षित है आदि विषयों का विशद विश्लेषण किया गया है। इस आलेख में रिचड्र्स के इन सभी पक्षों का विश्लेषण किया गया है।

बीज शब्द : रिचड्र्स, आलोचना, मनोवैज्ञानिक चिंतन, सौंदर्यशास्त्र, मूल्य सिद्धान्त ।

रिचड्र्स का मनोविज्ञान इसीलिए प्रधानत: भावक (पाठक) मनोविज्ञान है। स्रष्टा के मनोविज्ञान में उनकी अपेक्षाकृत कम अभिरूचि थी। उनका मनोवैज्ञानिक विचार अनेक अंशों में असाम्प्रदायिक (हेटरोडॉक्स) है। तथापि मुख्य रूप से वे व्यवहारवादी मनोविश्लेषण तथा गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के विचारों आदि के समर्थक है।

रिचड्र्स की रचनाएं और उनका विषय क्षेत्र इस प्रकार है- रिचड्र्स ने अपने पुराने सहपाठी सी.के. ऑग्डेन और जेम्स वुड के साथ मिलकर अपनी पुस्तक 'दि फाउंडेशंस ऑफ इस्थोटिक्स' (1922) लिखीं। यहाँ उन्होंने पहली बार प्रतिपादित किया कि काव्य का सौंदर्य रचना (कृति) में नहीं उसके प्रभाव में होता है। 'सौंदर्य वस्तु में नहीं, देखने वाले की निगाह में होता है' इस कहावत को मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का आधार प्रदान करते हुए रिचड्र्स ने आत्मनिष्ठ सौंदर्यशास्त्र की प्रस्तावना की। आगे चलकर 'प्रिंसिपल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' (1924) और 'प्रैक्टिकल क्रिटिसिज़्म' (1929) में अपने विशिष्ट अध्ययन से उन्होंने अपने दृष्टिकोण को विधिवत् विकसित और प्रतिष्ठित किया। 'फाउंडेशंस' के साल भर बाद रिचड्र्स ने ऑग्डेन के साथ 'मीनिंग ऑफ मीनिंग' (1923) प्रकाशित की। इस पुस्तक में उन्होंने भाषा-प्रयोग के दो रूपों की प्रस्तावना की- संकेतात्मक (सिंबॉलिक) और संवेगात्मक (इमोटिव) बाद में 'साइंस ऐंड पोएट्री' (1926) और 'दि फिलॉसफी ऑफ रेटरिक' (1936) जैसे कार्यों में भाषा-प्रयोग के इसी मूल सिद्धांत को पल्लवित किया गया है। डायकेस का कथन सही है कि- "जिस तरह कवियों पर प्लेटो द्वारा किए गए आरोपों का उत्तर शेली 'प्लातोनिज्म' का उपयोग करके दिया ठीक, उसी तरह रिचड्र्स ने विज्ञान द्वारा कविता को दी गई चुनौती का जवाब मनोविज्ञान का उपयोग करते हुए दिया।"[1]

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

'आलोचना' शब्द अंग्रेजी के 'क्रिटिसिज्म' शब्द का हिन्दी अनुवाद है। 'क्रिटिसिज्म' शब्द की निष्पत्ति 'ग्रीक शब्द' क्रिटिकोस' से मानी गई है जिसका अर्थ, विवेचन करना अथवा निर्णय देना है। रिचर्ड्स के अनुसार, आलोचना का उद्देश्य है, अनुभूतियों का विश्लेषण और अनुभूतियों का मूल्यांकन, आलोचना का साधन है अनुभूतियों के स्वरूप का ज्ञान, मूल्यांकन के सिद्धांत और संप्रेषण के सिद्धांत का ज्ञान।

मूल्य सिद्धांत–आलोचना की परिभाषा बताते हुए रिचर्ड्स कहते हैं– "मेरी दृष्टि में अनुभवों के अन्तर (सम्बद्ध–असम्बद्ध अनुभव) को स्पष्ट तथा उन्हें मूल्यांकित करने का प्रयास आलोचना हैं।"[2] उनकी दृष्टि में कुछ मूलभूत प्रश्न ऐसे हैं जो आलोचक से उत्तर की अपेक्षा रखते हैं। वह क्या है जो काव्य–पाठ द्वारा उपलब्ध अनुभूति को मूल्यवान बनाता है? एक अनुभव दूसरे अनुभव से बेहतर क्यों है? एक चित्र को दूसरे से क्यों अच्छा समझा जाए? एक कलाकृति के सम्बन्ध में अच्छी रायें हैं और दूसरी के प्रति नहीं, क्यों? इनके उत्तरों को साथ–साथ इन प्रारम्भिक प्रश्नों को भी नज़र अन्दाज नहीं किया जा सकता कि कविता क्या है? संगीत का चित्र क्या है? अनुभूतियों की तुलना कैसे की जाए? मूल्य क्या है?

रिचर्ड्स का मूल्य संबंधी सिद्धांत इस प्रकार है- एषणा की तुष्टि– मूल्य क्या है– "कोई भी वस्तु मूल्यवान हो सकती है जो किसी एषणा की संतुष्टि करती है। किन्तु शर्त यह है वह अपने समान अथवा उससे अधिक महत्वपूर्ण किसी एषणा को क्षरित न करे"[3] रिचर्ड्स ने आवेग के दो प्रकार बताये हैं–

1. अनुकूल एषणा (आकांक्षा) और
2. प्रतिकूल एषणा ।

कौन–सी एषणा अधिक महत्वपूर्ण है– बाधित होने वाली या बाधा पहुँचाने वाली? रिचर्ड्स की दृष्टि में जो एषणा अधिक बलवान है वही महत्वपूर्ण है। लेकिन क्या व्यक्ति की एषणाएँ फ्रायडीय शब्दों में इदम् (इड) के निकट नहीं पहुँच जाती हैं? महत्वपूर्ण एषणा बराबर समाज– सापेक्ष होगी। इसका स्पष्ट उल्लेख न करते हुए भी रिचर्डस इस बात को स्वीकार करते हैं– वह अपराधियों की निन्दा करते हैं। लेकिन वे इसलिए निन्दित नहीं है कि उन्हें दण्ड मिलता है। उनकी निन्दा इसलिए भी नहीं करते कि उनसे समाज को हानि होती है। वे इसलिए निन्दनीय है क्योंकि उन्हें महत्वपूर्ण मानवीय मूल्यों से वंचित रह जाना पड़ता है। अपराध भी एक एषणा है। उसकी सन्तुष्टि भी मूल्यवान होगी। लेकिन इसे वह महत्वपूर्ण नहीं मानते। निश्चय ही महत्वपूर्ण समाजसापेक्ष होगा। कभी–कभी वैयक्तिक एषणा और सामाजिक एषणा में गहरा द्वंद्व हो जाता है। वस्तुत: यह दो विरोधी नैतिकताओं का द्वंद्व है। प्रत्येक स्थिति में वैयक्तिक नैतिकता सामाजिक नैतिकता से हीन नहीं ठहराई जा सकती। रूढ़िग्रस्त समाज की नैतिकता प्राय: हासोन्मुखी और समयातीत होती है।सम्भवत: इसीलिए रिचर्ड्स सामाजिक नैतिकता को निर्णायक नहीं मानते। समाज सुकरात के प्रति बहुत क्रूर रहा है, गैलेलियों को भी वह क्षमा नहीं कर सका। ईसामसीह को सलीब पर जड़ दिया गया। उसके विचार से देखना यह चाहिए कि विभिन्न मनोव्यवस्थाओं में से किसके द्वारा अधिकतम आवेगों की संतुष्टि होती है।

साइनेस्थेसिस– रिचर्ड्स ऐसी मनोव्यवस्था के पक्ष में हैं– जो आवेगों के सामंजस्य और समन्वय का नाम है जिसमें मानवीय सम्भावनाओं की कम से कम क्षति होती है। काव्य का अनुशीलन पाठकों में इस प्रकार की मनोव्यवस्था का विकास कर सकता है और करता है जो वैयक्तिक और सामाजिक जीवन के लिए उपयोगी होता है। इस प्रकार की मनोदशा को वह

साइनेस्थेसिस (सह-संवेदनवाद) की संज्ञा देते हैं। इसी के माध्यम से वह मूल्य और सौंदर्य की व्याख्या करते हैं। रिचड्र्स का मत है कि आवेगों का संघटन विचित्र ढंग से होता है। यह संघटना ही सह संवेदना है। इसमें उभरने वाले विभिन्न विरोधी आवेगों का दमन नहीं किया जाता, बल्कि उन्हें पूरी छूट दी जाती है। वे उचित प्रभावों से स्वयं ही संघटित होते हैं। इस तरह की संघटना, सामंजस्य या व्यवस्था की आंतरिक शक्ति होती है। इसके लिए सचेत प्रयास की आवश्यकता नहीं होती इस शब्द का प्रयोग 'फाउन्डेशन ऑफ एस्थेटिक्स' 1922 में हुआ है- "सभी आवेग स्वभाव से ही सामंजस्यपूर्ण नहीं होते हैं, संघर्ष का होना सम्भव है और यह सामान्य बात है। एक सम्पूर्ण पद्धति को इस ढंग से निर्मित होने की, रूप लेने की जरूरत है जिसमें प्रत्येक आवेग को स्वतंत्र रखते हुए अकुण्ठ भाव से समन्वय स्थापित किया जा सके। इस प्रकार के किसी संतुलन में, कितना भी क्षणिक वह क्यों न हो, हमें सौंदर्यानुभूति होगी।"[4]

साइनेस्थेसिस में निस्संगता और आसक्तिहीनता की उपस्थिति आवश्यक है। इसके लिए वह मनोवैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत करते हैं। इस सामंजस्य में एक सक्रियता रहती है- समन्वित व्यक्तित्व की सक्रियता। साइनेस्थेसिस ताजा बनाता है और यह कभी परिसमाप्त नहीं होता। यह सक्रियता किसी एक दिशा में क्रिया-संलग्न नहीं करती। वह प्रमाता को बस कार्य के लिए तैयार रखती है। अगर वह व्यक्ति को काम में लगा देती है तो वह साइनेस्थेसिस नहीं रह जाएगी। वह साइनेस्थेसिस का भ्रम मात्र होगी। 'फाउण्डेशन्स' में वह लिखते हैं- ''जब कोई कलाकृति इस तरह की क्रिया (ऐक्शन) पैदा करती है या कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न करती है जो क्रिया की ओर ले जाती है तो वह या तो अपने प्रयोजन (फंक्शन) को पूर्णत: पूरा नहीं करती या संतुलन की दृष्टि से उसे 'सुन्दर' न कहकर उत्तेजनात्मक कहा जाएगा।"[5]

'प्रिंसिपुल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म' में रिचड्र्स साइनेस्थेसिस शब्द का प्रयोग नहीं करते। उसके स्थान पर 'अन्तर्वेशी' (इंक्लूजन) और 'सिन्थेसिस' का प्रयोग करते हैं। ये सर्वाधिक मूल्यवान कविता के लक्षण हैं। ब्रिम्साट और ब्रुक्स का कहना हैं कि 'सिन्थेसिस', 'साइनेस्थेसिस' का परिष्कृत रूपान्तर है। दोनों में कोई मौलिक भेद नहीं है। वे सन्तायना और रिचड्र्स के ग्रंथों से दो समानान्तर उदाहरण उद्धृत करते हुए उनका अन्तर स्पष्ट करते हैं। ''सौन्दर्य व्यक्ति के विभिन्न आवेगों को संश्लेषित करके उन्हें एक बिम्ब में प्रस्तुत करता है। इन क्षणिक समंजसताओं की अनुभूति ही समस्त गुढ़ार्थों और सौंदर्यानुभव की भूमिका है। इस सामंजस्य को प्राप्त करने के लिए दो पद्धतियाँ है- एक है सभी तत्वों को समन्वित कर लेना और दूसरी है असमंवित होने वाले तत्वों को ख़ारिज कर देना। पहले प्रकार का सामंजस्य 'सौन्दर्य का बोध' करता है तो दूसरे प्रकार का सामंजस्य औदाल्य का।''[6] - संतायना "आवेगों के संघटन के दो तरीके हैं- अपवर्जन और अन्तर्वेशन (इनक्लूजन) संश्लेषण द्वारा और अलगाव द्वारा (एलीमिटेशन) .... अधिकांश काव्य और कला कुछ प्रमुख और सीमित अनुभवों तक ही अपने को सीमित रखती हैं। इस तरह की कला का मानवीय जीवन में अपना महत्व और स्थान है। अलगाव द्वारा संश्लेषित काव्य को बहुत ऊँचा नहीं कहा जा सकता... ।''[7]

संतायना की तरह रिचड्र्स सुन्दर और उदान्त का भेद नहीं करते। वह अलगाव द्वारा संश्लेषित काव्य को और भी सीमित मानते हैं। उनकी दिलचस्पी संवृद्ध, गम्भीर और जटिल काव्य को सामान्य अपवर्जित काव्य से अलग करने में है। इससे निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं-

1. काव्य की सार्थकता उसके मूल्य बोध में है।

2. इस मूल्य में ही उच्चतर नैतिकता समाहित है।
3. उनका मूल्य बोध सुखवाद (हेडोनिज्म) से भिन्न है।

कई आलोचकों ने रिचड्र्स के मूल्य-सिद्धांत का अत्यधिक विरोध किया है। टी.एस. इलियट अपनी पुस्तक 'दी यूज ऑफ पोइट्री एण्ड दी यूज ऑफ क्रीटिसिज्म' की भूमिका तथा 'माडर्न माइण्ड' निबन्ध में अपना विरोध व्यक्त करते हैं- "प्रत्येक गंभीर आलोचक की तरह रिचड्र्स गंभीर नैतिकतावादी है। उनकी नीतिमत्ता या मूल्य- सिद्धांत मुझे स्वीकार्य नहीं है। मैं इस प्रकार के किसी सिद्धांत को स्वीकार नहीं कर सकता जो शुद्ध वैयक्तिक-मनोविज्ञान की नींव पर खड़ा हो। उसके काव्यात्मक अनुभव का मनोविज्ञान जिस प्रकार खुद उसी के काव्यानुभव पर आधारित है उसी प्रकार उसका मूल्य-सिद्धांत उसके अपने मनोविज्ञान पर।" इलियट का निर्वैयक्तिकता का सिद्धांत रिचड्र्स के मत के विरुद्ध पड़ता है। वैयक्तिक मनोविज्ञान के आधार पर साहित्य की सार्वभौमिकता और वस्तुनिष्ठता को नहीं समझा जा सकता। रिचड्र्स का मनोविज्ञान सूडो मनोविज्ञान है। अत: उस पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए। डेविड डेचेज ने टिचड्र्स के इस मत में निहित एक कठिनाई का निर्देश किया है और वह यह हैं कि- ''काव्य-मूल्य के संबंध में मनोवैज्ञानिक धारणाओं पर अधिकांशत: आधारित रिचड्र्स की जो सामान्योक्तियाँ है, उन्हें कोई भी महत्वपूर्ण समसामयिक मनोविज्ञानी स्वीकार नहीं करता।"[8] मूल्य सिद्धांत के संबंध में रैन्सम' का कहना है कि रिचड्र्स का काव्य संरचना-विषयक लेख न केवल शुद्ध परिकल्पना है, बल्कि इसे स्वीकार कर लेने पर आलोचना ही निर्मूल हो जाएगी। रिचड्र्स के कथनानुसार यदि हम यह मान लें कि 'संतुलित विश्रांति' की स्थिति उद्दीपक वस्तु की संरचना में बिल्कुल नहीं होती' बल्कि हमारी 'अनुक्रिया में होती है, तो 'काव्य-वस्तु के विश्लेषण की आलोचना का श्रम निरर्थक हो जाता है। यही नहीं, कवि द्वारा कविता को विशिष्ट 'आकृति' प्रदान करने का श्रम भी निरर्थक सिद्ध होता है। जेम्स का कथन- "इस सौंदर्य मीमांसा का पूरा संबंध वस्तु के बदले उसके परिणाम से है। क्योंकि आवेगों का संतुलन तथा सामंजस्य, जिनकी उत्पत्ति महान काव्य से मानी जाती है, बेहोशी की किसी निर्दोष दवा से भी उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में बेहोशी की दवा और काव्य, ये दोनों ही मूल्यवान अनुभूतियों के समान उद्दीपक सिद्ध होते हैं।"[9] निष्कर्षत: रिचड्र्स के मूल्य सिद्धांत का गुण तथा दोष कुछ इस प्रकार है-

1. **समन्वयात्मक गुण** : रिचड्र्स के मूल्य विचार प्रकृतवाद (नैचुरिलिज्म) तथा उपयोगिता वाद का मिला जुला रूप है। मनुष्य की मूल्यांकन प्रक्रिया को कैमरे के यथार्थ चित्रण प्रक्रिया के समान ही उपस्थित किया गया है। पर पूर्ण प्रकृतवाद नहीं है। इसमें आदर्शवादिता की गंध है। औरयह आदर्शवादिता सूक्ष्म और बुद्धिवादी ढंग से निरूपित की हुई है।
2. **मूल्य दृष्टि सापेक्षवादी है-** रिचड्र्स ने अनेक अच्छी प्रकार की मनोव्यवस्थाएँ मानी हैं। पर प्रोफेसर, गणितज्ञ या नाविक की मनोव्यवस्थाएँ समान नहीं हो सकतीं। किसी विशिष्ट मनोव्यवस्था को सर्वोत्तम बताने की अपेक्षा रिचड्र्स ने सर्वोत्तम मनोव्यवस्था का लक्षण यह दिया है कि जिसमें मानवीय संभावनाओं की कम से कम निरर्थकता लाज़िमी हो। यह एक ऐसी आदर्श स्थिति है जिसके लिए व्यक्ति और समाज को अपने सामने हमेशा नवीन नीतिव्यवस्था की आवश्यकता पड़ेगी। और उत्तरोत्तर एक की अपेक्षा दूसरी मनोव्यवस्था श्रेयसी प्रमाणित होगी। इस तरह रिचड्र्स का मूल्य सिद्धांत सापेक्ष हो जाता है।
3. **गतिशील नैतिकता का समर्थक-** रिचड्र्स का मूल्य सिद्धांत गतिशीलता को प्रश्रय देता है। आचारशास्त्र का विरोध इसी कारण रिचड्र्स ने किया हैं कि उसमें विहित नियमों को जड़ माना जाता है। वे आचारशास्त्र की अपेक्षा कला को नैतिकता का अधिक विश्वसनीय प्रतिफलन इसलिए मानते हैं कि आचारशास्त्र जहाँ स्थूल और सामान्य नीति नियमों के

रूप में नैतिकता को सूत्रबद्ध करता है वहाँ कला उसके सूक्ष्म विषयों को उद्घाटित करती है। रिचड्र्स के अनुसार नैतिकता का सही रूप जीवन के इन्हीं सूक्ष्म विशेषों में है। रिचड्र्स नैतिकता की गतिशीलता का वेग वैसा ही रखने का आग्रह करते हैं जैसा परिस्थितियों के परिवर्तन का हो। उनका कथन है कि हमें किसी शरण देने वाले चट्टान की नहीं, तेजी से ले चलने वाले वायुयान की आवश्यकता है।

4. सुखवाद (हेडोनिज्म) का विरोधी है- रिचर्डस मनुष्य की समस्त क्रियाओं का उद्देश्य आनन्द को मानने वाले विचार का उपहास करते हुए कहते हैं कि यह तो घोड़े के आगे गाड़ी रख देना है। आनन्द की प्राप्ति के लिए कोई व्यक्ति कविता पढ़ता है, यह मानना रिचड्र्स के अनुसार वैसा ही बेतुका है जैसा यह मानना कि कोई गणितज्ञ किसी समस्या के समाधान में आनन्द प्राप्ति के लिए प्रवृत्त होता है।

   कविता पढ़ने में या समस्या के समाधान में बहुत आनन्द मिल सकता है पर यह आनन्द वस्तुत: उक्त क्रियाओं का लक्ष्य नहीं है अपितु उनकी प्रक्रिया में उत्पन्न वस्तु है, ठीक उसी तरह जैसे ये मोटर साईकिल चलने की प्रक्रिया में उत्पन्न शोर उसके चलने का कारण नहीं है अपितु उसके चलने की सूचना देने वाला है। इस प्रकार सुखवाद का एक प्रकार से विरोध किया है। आवेगों की संतुष्टि का अर्थ आनन्द नहीं है।

5. व्यक्ति को आधार मानकर नैतिकता का निरूपण करते हैं। वैयक्तिक नैतिकता को ही सामाजिक नैतिकता के रूप में परिणत करके दिखाते हैं। इसके लिए उन्होंने वेन्थम के सूत्रों का हवाला दिया है। वे सामाजिक नैतिकता की अपेक्षा वैयक्तिक नैतिकता को अधिक 'गतिशील' मानते है। इस प्रकार रिचड्र्स का झुकाव व्यक्ति के पक्ष में अधिक हुआ है।

दोष : रिचड्र्स के मूल्य सिद्धांत की सबसे बड़ी सीमा यह है कि उन्होंने सामाजिक वास्तविकताओं पर ध्यान न देकर केवल व्यक्तिवादी मनोविज्ञान की दृष्टि से मूल्यांकन के मानदंड स्थिर किये हैं। सम्भवत: विचारों की यह एकांगिकता प्रत्ययवादी (आइडियलिस्ट) दर्शन के परिणाम स्वरूप है। इस पर काडवेल ने ठीक कहा है कि कला की समीक्षा का अर्थ कला से बाहर जाना है जिसके माने हैं समाज के अन्दर प्रवेश करना। अत: कला को जीवन से सम्बद्ध करने के लिए उन्होंने जिस मनोवैज्ञानिक मूल्यवाद का सहारा लिया है वह बेतुका सा लगता है। वह यथोचित सा प्रतीत नहीं होता। अत: रिचड्र्स के मूल्य सिद्धांत पर अनेक आलोचकों द्वारा लगाए गए आक्षेपों के बावजूद उनके सिद्धांत में उनकी स्वयं की मौलिकता की उपस्थिति बखूबी दर्ज हुई है जिसमें दोष के साथ-साथ गुण भी मौजूद है जैसे- समन्वयात्मकता, सापेक्षवादी दृष्टि, गतिशील नैतिकता, सुखवाद का विरोध, व्यक्ति को आधार मानकर नैतिकता का निरूपण आदि। जिससे यह स्पष्ट होता है कि रिचड्र्स ने आलोचना क्षेत्र को एक नई दिशा देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

संदर्भ सूची-

1. जैन, निर्मला, काव्य-चिंतन की पश्चिमी परंपरा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2006, पृ. 10
2. सिंह, बच्चन, आलोचक और आलोचना बच्चन सिंह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण- 2015, पृ. 22
3. शर्मा, देवेन्द्रनाथ, पाश्चात्य काव्यशास्त्र, मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, संस्करण- 2016, पृ. 50
4. तिवारी, अजय, पश्चिम का काव्य विचार, स्वराज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2003, पृ. 11
5. तिवारी, रामपूजन, पाश्चात्य काव्यशास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1971, पृ. 40

6. गुप्त, गणपति चन्द्र, भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धांत, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 35
7. देवेन्द्रनाथ शर्मा, पाश्चात्य काव्य शास्त्र, मयूर पेपरबैक्स, दिल्ली, पृ. 65
8. वाजपेयी, नन्ददुलारे, नया साहित्य नए प्रश्न,स्वराज प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2004, पृ. 13
9. जैन, निर्मला (संपादक), नयी समीक्षा के प्रतिमान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1977, पृ. 77